झुलेलाल
अवतारलीला

झुलेलाल अवतारलीला

ब्रह्मचर्य रक्षा हेतु मंत्र

ॐ नमो भगवते महाबले पराक्रमाय
मनोभिलाषितं मनः स्तंभ कुरु कुरु स्वाहा।

रोज दूध में निहारकर 21 बार इस मंत्र का जप करें और दूध पी लें। इससे ब्रह्मचर्य की रक्षा होती है। स्वभाव में आत्मसात् कर लेने जैसा यह नियम है।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

स्वास्थ्य के लिए मंत्र

अच्युतानन्त गोविन्द नामोच्चारण भेषजात्।
नश्यन्ति सकला रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम्।।

'हे अच्युत! हे अनंत! हे गोविन्द!' इन नामों के उच्चारणरूपी औषधि से सब रोग नष्ट हो जाते हैं। मैं यह सत्य कहता हूँ..... सत्य कहता हूँ।'

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुभव-अमी

वासना-पंक से खींच राम-रसायन में निमग्न कराने वाले निगमागम के औलियाः पूज्य बापू

एकमेवाक्षरं यस्तु गुरूः शिष्य प्रबोधयेत
पृथ्वीव्यां नास्ति तदद्रव्यं यद्दत्वाचाऽनृणी भवेत्।।

'गुरू शिष्य को जिस अक्षर से ज्ञान या प्रबोध देते हैं, जगाते हैं, उससे उऋण होने के लिए शिष्य पृथ्वी का कोई भी द्रव्य क्यों न समर्पित कर दे, फिर भी वह ऋण-मुक्त नहीं बन सकता।' इस आशय की शब्दशः अनुभूति मैंने इसी जीवन में कर ली है। कहाँ काम-वासना से परितप्त मेरा पूर्व जीवन और कहाँ योग साधना और वेदांत-सार से दिनो दिन निर्विकार और निर्मल बनता हुआ मेरा वर्त्तमान योगानंदमय जीवन ! पहले वासना पंक में डूबे हुए कामकीट जैसा था, पर प्रातः स्मरणीय परम पूज्य संत श्री आसाराम जी बापू की कृपा-दृष्टि परम पावन सुखमय अकस्मात का दिन बन गया क्योंकि उसी दिन पतित-पावन पूज्यश्री का प्रथम दर्शन हुआ। गया तो था स्वार्थ के कंकड़ एकत्र करने पर मीरा की तरह राम रतन मिल गया।

मुझे अपना पहले का जीवन स्मरण आ रहा है। जब मैं कुटिल कामी था, तब तो दशा यह थी कि पत्नी के पीछे लगे अस्पताल तक जा पहुँचता। पहली पत्नी मरी नहीं कि दूसरी शादी बना ली, पर जब वह भी प्रभु को प्यारी हो गयी तब क्या करता ? 51 वर्ष का हो चुका था, पर काम-तृष्णा हिलोरें लेती रही। पत्नी के बिना एक रात काटना भी पहाड़ जैसे लगता। तीसरी शादी करने का विचार भी किया। अपने निकट सम्बन्धियों के प्रयास, कुटुम्बीजनों के शोध और उनके आग्रह से दलालों पर भी पानी की तरह पैसा बहाया। अंत में मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश एवं गुजरात के कच्छ और थरपारकर आदि अनेक छोटे-मोटे स्थानों में रहने वाले अपने जाति-बाँधवों में एक 18 वर्षीय विवश लड़की ढूँढ निकाली गयी। उससे सम्बन्ध का निश्चय हुआ, परंतु तापशापमय जगत-कूप में गिरूँ इसके पहले पूर्वजों के पुण्य-प्रताप से खिंचकर पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाह जी महाराज के दर्शनों के लिए डीसा आश्रम की ओर चल पड़ा। यद्यपि उस पतित-पावन का दर्शन तो न हुआ, पर एक ऐसी अलौकिक विश्वविभूति के चरणों में पहुँच गया, जिन्होंने प्रथम दर्शन में ही अपनी सहज दृष्टि फिराकर तूफानी काम-सरिता में चक्कर काटती हुई मेरी जीवन-नौका को पार लगा दिया।

उस दिन नित्य बंद रहने वाली कुटिया का द्वार खुला। द्वार पर सुशोभित भव्य मूर्ति को मैं निहारता ही रहा गया। योगशक्ति से उद्दीप्त विशाल नेत्र, गर्वोन्नत दीप्त भाल, अपार तप-तेजोमय मुख-मण्डल, आध्यात्मिक प्रभा और मधुमय स्मित। ऐसे महापुरूष का दर्शन आज तक कहीं न पाया था, जिसके प्रथम दर्शन में ही मेरा हृदय प्रेमाकर्षण से आबद्ध हो गया। अभी पहली

ही भेट तो थी, फिर भी परम पूज्य संतश्री की वाणी सुन मैं आश्चर्यचकित रह गया। मैं उनसे कुछ याचना करूँ कि उन्होंने ही प्रारंभ कियाः "**अब तुम लौकिक शादी के बंधन में क्यों बँधना चाहते हो ? मैं तुम्हारी शादी अलौकिक से करा रहा हूँ।**"

आश्चर्य ! मेरे मन की बात कैसे ताड़ ली ! इस एक वाक्य ने तो मेरे चित्त की हालत ही बदल दी। दृष्टिपात मात्र से मानो उन्होंने मेरे काम-विकार को भस्म कर दिया। मुझे पता भी न चल सका कि मेरी कामवासना कहाँ छू-मन्तर हो गई।

जब परम पूज्य श्री को नमन करके घर लौटता हूँ तो पाता हूँ कि मैं वह चंदीराम नहीं रह गया हूँ। मेरी काया पलट चुकी है और भीतर ही भीतर मैंने निश्चय भी कर लिया है कि अब किसी भी कीमत पर यह शादी न करूँगा। इस रहस्य का पता सम्बन्धियों को जब चला तो वे दंग रह गये। साथ ही नाराज भी हुए कि मेरे लिए पानी की तरह पैसा बहाकर एक प्रांत से दूसरे प्रांत तक एड़ी का पसीना चोटी तक पहुँचाकर कहीं एक दुर्लभ वस्तु की तलाश की। उस लड़की और उसके कुटुम्बीजनों ने कितनी लाचारी में पड़कर शादी की शर्तों को स्वीकार किया और अन्त में अब...? यह अब हम लोगों के सारे श्रम पर पानी फिरा रहा है ! उन्हें आश्चर्य होता था कि शादी के लिए मैं इतना उत्सुक होते हुए भी एकाएक कैसे बदल गया ? मुझे क्या हो गया ? मैं कहाँ जाकर आया हूँ ? आदि।

मेरे भाइयों, सम्बन्धियों तथा दलालों ने भी मुझे बहुत समझाया, न समझने पर मेरी वासना को पुनः उद्दीप्त करने का एक और प्रयत्न भी करने की योजना बनी। मुझे उस दिन की घटना ठीक-ठीक याद है। वह अनुभव मेरे लिए अदभुत बन गया। ऐसा अनुभव जीवन में कभी हुआ ही न था, किसी विरले को ही ऐसे अनुभव से पाला पड़ा होगा। सचमुच मेरे लिये वह एक कल्पनातीत अनुभव लग रहा है।

कुटुम्बी सीख दे रहे हैं- "एड़ी का पसीना चोटी तक पहुँचाकर यह इन्तजाम किया गया है।' मैं भी आ गया उनकी बातों में। भीतर उन गहरी निगाहों ने मेरा बुद्धिपूर्वक काम भस्म कर दिया था। कुटुम्बी और दलालों के समझाने पर उनसे सहमत होते हुए इस नतीजे पर आया कि एक बार उस ललना से एकांत कमरे में मिलूँ।

मेरी मुलाकात एक बन्द कमरे के एकान्त में उस होने वाली पत्नी के साथ निश्चित कर दी गई। यह आग और पेट्रोल का ही तो संगम था। अग्निविस्फोट तो होना ही था और मेरा जीवन तो ऐसी घटनाओं से अभ्यस्त भी हो चला था। एक कामी पुरूष.... कल पत्नी बनने वाली यौवना सम्मुख खड़ी.... एकांत शून्य कमरा.......। सभी अनुकूल वातावरण......। यद्यपि अपनी कामाग्नि को जगाने में मैंने कोई कोर-कसर बाकी न रखी। सोचा भी उस समय कि यदि वासना जगी तो विवाह कर ही लूँगा, पर विकान न उठा तो नहीं ही उठा। मैं तो महाकामी था, पर आज क्या हो गया मुझे ? ओह ! ऐसा अनुभव तो बड़े-बड़े तपस्वियों को भी शायद न हुआ होगा। एकांत में... कुमारी यौवना को इरादापूर्वक स्पर्श करता रहा पर कामवासना नहीं जगी। ऐसा कैसे हुआ ?

घण्टे भर प्रयास करता रहा पर कामवासना नहीं जगी। ऐसा कैसे हुआ ? घण्टे भर प्रयास करता रहा, पर निष्फल। मानो काम वासना की कुंजी कहीं और, शायद उस अलमस्त फकीर के पास ही छूट गई। उसी परम कृपालु की दया का यह फल मिला है, एकाएक मुझे ऐसा भान हुआ। लगा कि मानव स्वरूप में मुझे मेरे महाप्रभु ही मिल गये हों। यदि उस दिन मुझ कामी पर उनकी योगशक्तियुक्त अमीमय दृष्टि नहीं पड़ी होती और मुझमें उद्दीप्त कामदेव का दहन हो गया होता तो मैं पुनः विवाह-बंधन में तो बँध ही जाता। फिर कहाँ होता ? जीते जी नरक में न ! उस समय का मेरा कफयुक्त स्थूल भारी-भरकम शरीर, दमे से खोखला अस्थि पिंजर, जीर्ण कब्ज, गर्मी-धूप से तो इतना भय कि छाता के बिना दुकान से नीचे उतरना भी असंभव। एक कदम बुढ़ापे पर जमा हुआ और तीसरे विवाह की तैयारी। सोचता हूँ कि न करे नारायण यदि कहीं यह हो जाता तो आज मेरे तन-मन में, घर-परिवार और पुत्रों में कितनी अशांति जग जाती ? वर्तमान बच्चों और नयी माँ के बीच का तनाव, मेरे शरीर में प्रविष्ट व्याधि, मैं तो बिस्तर पर पड़ा कराहता होता और नारकीय जीवन की यंत्रणा सहता। इस विचार मात्र से मैं काँप-काँप उठता हूँ। मेरे परम प्रिय परमात्मा स्वरूप सदगुरूदेव ने मुझे नरक में गिरते-गिरते यथा समय बचा लिया।

मैंने उसी समय निश्चय कर लिया कि चाहे कितनी भी विघ्न-बाधाएँ आये, भाई-बंधु-सगे-सम्बन्धी चाहे कितना ही विरोध करें पर इन महापुरूष की छाया छोड़ कभी भी अलग नहीं हो सकता। मुझे अब विषय-वासना की दुनियाँ नहीं चाहिए, सांसारिक भोग-विलास अब मुझे आकर्षित नहीं कर सकते। मेरी हिलती-डोलती जीवन नैया के सच्चे और समर्थ खवैया वे ही महापुरूष हैं और वे ही मुझे भवसागर से पार उतार सकते हैं।

मुझे जब अपनी सही स्थिति का भान हुआ तो उस युवती को बहन के रूप में देखा.... उससे क्षमा याचना की, उसे पैसा भी दिया। तत्पश्चात मैं परम पूज्य बापू के मंगल मार्गदर्शन में योग-पथ का पथिक बन गया। पूज्य श्री बापू ने मुझे नेति, धौति, आसन, प्राणायाम, ध्यान, धारणा और समाधि आदि न जाने कितनी ही यौगिक विधियों की रीतियाँ बता-बताकर मेरे सारे कल्मष को धो बहाया है। आज मेरा भद्दा कफयुक्त स्थूल शरीर काफी हलका बन गया है। योग साधना के अभ्यास से वह इतना स्फूर्त और फूल जैसा हलका हो गया है कि मैं दौड़ में नवयुवकों से भी स्पर्धा कर सकता हूँ। ध्यान के अनेकानेक गूढ़ अनुभव मैंने पा लिये हैं। पूज्य श्री की कृपा-डोर को पकड़ ध्यान में स्वर्ग और पाताल मुलाकातें भी पा चुका हूँ। जिस योग के प्रसाद को पाने के लिए बड़े-बड़े तपस्वी पहाड़, जंगल और गुफा में चक्कर लगाते और तपते हैं उस दुर्लभ प्रसाद को मैंने पूज्यश्री के चरणारविदों में अपने को समर्पित कर के अनायास ही पा लिया है।

परमात्मा अनन्य भक्तों के योगक्षेम को सदा स्वयं वहन करता रहा है, ठीक वैसे ही साधना-क्षेत्र में हमारे सदगुरूदेव भी शिष्य के योगक्षेम की रक्षा करते हैं। अनेकों बार मैंने गुरूदेव

के इस स्वरूप का साक्षात्कार किया है। पूज्यश्री के चरणों में रहते हुए आश्रम में मेरा जीवन ऊर्ध्वगामी हो चला है।

एक बार किसी कार्यवश मुझे अपने गाँव डीसा जाना पड़ा। वहाँ थोड़े दिन रूका रहा। परिवार के मायाजाल में ऐसा घिरा कि वहाँ रहकर साधना करने का विचार मन में जमने लगा। सोचा, आश्रम में रहकर काफी साधना कर चुका हूँ। साधना चाहे आश्रम में करें या घर में रहकर करें। कोई अंतर नहीं पड़ता। बस उसी क्षण से मेरी यात्रा पतन की दिशा में प्रारंभ हो गई और मैं नादान घर पर ही रहने का निश्चय कर बैठा।

एक दिन की घटना है कि मैं अकेले प्रातःकाल में सड़क पर घूमने निकल पड़ता हूँ। सामने देखता हूँ तो मुझसे कुछ ही कदमों पर आगे परम पूज्य गुरूदेव चलते जा रहे हैं। पहचान लेने पर मैं आगे बढ़कर श्री चरणों का स्पर्श करने को लपका, पर देखता क्या हूँ कि गुरूदेव अन्तर्धान हो चुके हैं। बस, मुझे संकेत मिल गया और दो दिन में ही घर की माया समेट आश्रम की दिशा में चल पड़ा और पुनः श्री चरणों में जा बसा। बाद में मुझे स्मरण आया कि मैं किस पतन की खाई में गिरने के लिए घर लौटा था, जिससे गुरूदेव ने शीघ्र बचा लिया।

परम प्रेमी, परम हितैषी, परम सुहृद, हजारों की कामनाओं के पूरक कल्पवृक्ष तुल्य परम कृपालु सदगुरूदेव अपने साधकों और शिष्यों में साधना के बीज तो बोते ही हैं, पर पूज्य श्री का ध्यान उन बीजों को परिपुष्ट करने की ओर भी रहता है। वे निरंतर प्रेरणा दे-देकर उसे अंकुरति करते हैं, सिंचित कर हरा भरा बनाते हैं और जब तक उसका पूर्ण विकास नहीं देख लेते तब तक उसके परिपोषण का विशिष्ट उत्तरदायित्व भी अपने ऊपर लेकर चलते हैं। साधक के लौकिक और पारमार्थिक योगक्षेम को वहन करने वाले अनंतश्री सम्पन्न परम प्रिय परमात्मा रूपी गुरू के पावन चरणों में शतशः वंदन !

महंत चंदीराम

संतश्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

डूबतों के उद्धारकः पूज्य बापू

सन् 1981 के गुरूपूर्णिमा पर्व पर शिविर का आयोजन हुआ था। मैं सदगुरूदेव के दर्शन पूजन के निमित्त आश्रम में आया था। साथ में बालवृन्द एवं महिला मंडली भी थी। साबरमती का प्रवाह आश्रम सीढियों को छूता हुआ बह रहा था। नदी तट की सीढ़ी उतरते ही पानी का गहरा कुंड मिल जाता था। यों नदी का मूल प्रवाह तट से काफी दूरी पर था। वहाँ जाते समय इस गहरे कुण्ड से बचने के लिए दीवार पर स्पष्ट सूचना भी लिख दी गई थी। जैसेः "यहाँ पानी गहरा है,

उस ओर से घूमकर जाओ।" जाते समय तो मैं सूचनानुसार चक्कर काटते हुए गया, पर लौटते समय सूचना ध्यान से उतर गई और छिछले पानी में चलते-चलते एकाएक गहरे कुंड में सरक गया ! पैर के नीचे से जमीन ओझल हो गई और मैं गहरे जल में गुलाट खा गया। मेरे हाथ में एक छः वर्षीय बालिका भी थी वह हाथ से छटक कर कहीं गहरे पानी में लापता हो गई। उसे पकड़ने के लिये मैंने इधर-उधर काफी तलाश की, पर सब व्यर्थ। मासूम बालिका कहीं गहरे में निकल गई। मैं भी उसकी तलाश करते-करते डूबने लगा, क्योंकि तैरना तो मैंने सीखा ही न था, फिर किनारा मिलता तो कैसे....? पानी भी गहरा.... मेरे मुँह से एकाएक चीख निकल पड़ीः "बापू !.... बापू...!"

लगता है बापू ने मेरी प्रार्थना सुन ली थी। डूबते हुए अंतिम प्रयास करते हुए जी जान से ऊपर आना चाहता था कि किसी ने मेरे हाथों में बालिका के हाथ को पकड़ा दिया और हम दोनों को पकड़कर किनारे से लगा दिया। पानी से बाहर निकलते ही मैंने अपने उस तारनहार की ओर निहारा, आगे कुछ कहूँ कि व धवल प्रतिमा वहीं कहीं अतलजल में विलीन हो गई, अदृश्य हो गई....। धीरे-धीरे मैं स्वस्थ हुआ, बच्ची को गोद में सँभाला, कपड़े ठीक-ठाक किये और सीढ़ी चढ़ आश्रम की ओर निकल पड़ा।

अब तक अनेक साधकों के मुख से पूज्य श्री के अगम्य दर्शन प्रसंगों को मैं सुना करता था, परंतु धन्य है संकट की मेरी वह घड़ी, जिसमें मैं और मेरी बच्ची जीवन-मरण के बीच संघर्ष में डूबे थे। इस निर्णायक घड़ी में पूज्य बापू ने हमें उबार लिया। पौराणिक आख्यानों में तो प्रभु गरूड़ के सहारे डूबते गजराज को उबारने जा पहुँचते हैं, किन्तु वे ही सर्वव्यापी परमेश्वर सदगुरूदेव के स्वरूप में अपने करूणा-कटाक्ष से हमें उबारने आये और पल भर में ही हम दोनों उबर गये। यदि ऐसा चमत्कार न हुआ होता तो गुरूपूर्णिमा का यह ध्यानयोगामृत शिविर हमारे लिए जहरीला घूँट बन जाता है। आज भी हमें जब वह घटना स्मृति में कौंध जाती है तो आँखें भावाश्रुओं से तर-बतर हो उठती हैं, हृदय कृतज्ञता से तरंगे लेने लगता है। पूज्य बापू की पावन स्मृति में हृदय हरि-रस से सराबोर हो छलक उठता है।

रमेशभाई शिवलाल पटेल

बी.के. एन्टरप्राइज के ऊपर, सलाबतपुरा, सुरत।

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अवतार-लीला

वरूणावतार श्रीलाल उदयराज बनाम दरियालाल

सिंधु सागर का तट है। महापर्व का मेला हो ऐसा लगता है। नगर की हिन्दू जनता विभिन्न मंडल और मंडलियों के साथ वहाँ उमड़ पड़ी है। मेले में आबालवृद्ध हैं, स्त्रियाँ हैं। सभी के अंतर में एक ही तड़प है कि हिन्दू धर्म पर छाये हुए संकट के बादलों से कैसे छुटकारा पायें। सभी के हृदय में मानो एक ही निश्चय मचल रहा है कि 'स्वधर्म की रक्षा में प्राण भी दे दो, पर धर्म न छोड़ो। धर्म छूटा तो सब कुछ छूट गया।" सबके हृदय में इस श्रद्धा ने मानो जड़ जमा लिया है कि प्रत्यक्षदेव दरिया लाल निश्चय दी दया सिंधु हैं, वे ही हमें संकट से पार उतारेंगे।

बात लगभग आज से 900 वर्ष पहले की है। वीर यशराज की मृत्यु के दौ सौ वर्ष सिंध का लौहर साम्राज्य विनष्ट हो चुका था। उसकी जगह इस्लामी सल्तनत अपनी जड़ें जमाने लगी थी। उसी समय मकबरखान नामक एक महत्त्वाकांक्षी अहंकारी सरदार ने शाह सादतखान को तलवार के घाट उतार दिया और स्वयं सिंध के सिंहासन पर बैठ गया और मरखशाह के नाम से अपनी धाक जमाने में जुट गया। वर्तमान नगरठट्टा नामक नगर उस समय की नगरसमै कही जाने वाली नगरी थी, जो कभी सिंध राज्य की राजधानी कही जाती थी।

मरखशाह जितना ही महत्त्वाकांक्षी था, उतना ही धर्मांध और अनाचारी भी। उसने हिन्दू जाति को समाप्त करने के एक पर एक दाँव लगाना प्रारंभ कर दिया। एक दिन उसका फरमान निकला किः "या तो तुम लोग इस्लाम धर्म को अंगीकार करो या तुम जिसे भगवान कहकर पूजा-इबादत करते हो उसका साक्षात्कार कराओ।"

इस आदेश से सारी हिन्दू जाति प्रकंपित हो उठी, समस्त महाजन मंडलियों में खलबली मच गई। "अब क्या किया जाये ?" इस सोच-विचार के अंत में नगर समै के महाजन मण्डली ने एक उपाय यह सुझाया कि इस आतंक से बचने के लिए अन्तिम उपाय यह है कि सभी लोग सिंधु सागर तट पर एकत्रित हों और दरिया लाल की आराधना करें। इस निर्णय के कारण वजीर आहा से जवाब प्रस्तुत करने के लिए आठ दिन का समय लिया गया। फिर 'या तो तरेंगे, या मरेंगे' के दृढ़ निश्चय के साथ अपार हिन्दू जनता सिंधु सागर तट पर उमड़ पड़ी।

वह एक अजीबो-गरीब दृश्य था। किसी के हाथ में तबूरा था तो किसी के हाथ में झाँझ और पखवाज। किसी के हाथ में करताल था तो किसी के हाथ मे मंजीरे से अलंकृत। सूर्य अभी उदय हो इसके पहले ही एक एक कर अपार जन समूह महाजन मण्डल के आश्रय में सागर तट पर एकत्रित हो गया। विद्वान पंडितों ने वरूणदेव की विधिवत पूजा-स्तुति सम्पन्न की। तत्पश्चात् प्रातः कालीन शीतल मंद सुगंधित वातावरण में दरियालाल की प्रार्थना में रत अनगिनत साजबाजों से संगीत की लहरियाँ प्रतिध्वनित हो उठी।

हे रत्नाकर सागर देवता ! हे जगजीवन धारक हे !
दया के सिंधो ! कृपा भंडारा ! दुःखदरिद्र विनाशक हे।
...हे रत्नाकर....
नित्य अखंड अनंत अनादि व्यापक विश्व चराचर हे।
भक्ताश्रय जलपति जगवंदन परोक्ष देव सनातन हे।
हे रत्नाकर...
शिव विष्णु तुं ब्रह्मतेज तुं सकल संकटहारक हे।
तव शरणे छे अरज अमारी संकट अम पर आव्युं भारी।
लेचे उगारी शरणागतने.....
हे रत्नाकर....

इसी प्रकार की प्रार्थनाएँ और भजन गाते-गाते, कीर्तन करते-करते दिन बीता, रात आई और गई, दूसरे दिन का सूरज निकला और अस्त हुआ। सभी अपार भूख-ताप से उत्तप्त हो उठेष फिर भी सागर देव के प्रति श्रद्धा भावना बढ़ती ही गई। सब में अटूट श्रद्धा वर्त्तमान रही कि सागर देव कोई न कोई मार्ग दिखायेंगे ही और हम सभी को इस धर्म-संकट से पार उतारेंगे। देखते ही देखते तीसरे दिन का सूर्य भी उग आया। दो-दो दिन से किसी के घट में अन्न का कौर भी नहीं पड़ा था। तीन दिन की पूरे जनसमूह की भूख-प्यास देख साथ ही अपने प्रति अटूट श्रद्धा का उनमें दर्शन कर संध्या के समय सागर-देवता का हृदय डोला, सिंधु-जल में एक हलचल हुई। एक तेज प्रकाश-पुंज में वह निराकार ब्रह्म अपना अव्यक्त रूप व्यक्त करते हुए बोलेः

"हिन्दू भक्जनों ! तुम सभी अब अपने अपने घरों की ओर लौट पड़ो। तुम्हारा संकट दर हो इसके लिये मैं शीघ्र ही नसरपुर में अवतार लेने जा रहा हूँ। फिर मैं सभी को सच्ची राह दिखाऊँगा। इसलिए निश्चित मन से सभी जहाँ से आये हो वापस लौट जाओ, पर अपने धर्म को सदा पकड़े हुए बढ़ना।"

इस आकाशवाणी को सुनना था कि सभी हर्ष विभोर हो नाच उठेः "जय जलनारायण.... जय जलपति....जय जगद्धारक हे.....।" का घोष करते-करते सभी नगर को वापस लौट पड़े।

जब इस आकाशवाणी का पता वजीर आहा को चला तो उसके आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा।। उसने मरखशाह को आकाशवाणी की बात बतायी। उसे फिर आदेश मिला कि नसरपुर में जाकर पता लगा लो, यदि किसी बालक ने जन्म लिया हो तो उसे मेरे पास ला उपस्थित करो।

"जी, जहाँपनाह !" कहकर मन ही मन असमंजस में डूबा हुआ आहा अपने घर लौटा।

सप्ताह हुआ होगा कि आकाशवाणी की वाणी ने सत्य का रूप लिया, नसरपुर में ठक्कर रत्नराय के यहाँ माता देवकी के गर्भ से एक बालक ने अवतार लिया। ठीक वैसे ही जैसे भगवान श्रीकृष्ण ने पाप-भार से दबी पृथ्वी को उबारने के लिए माता देवकी के पेट से अवतार ग्रहण

किया था। हिन्दुओं पर आच्छादित धर्म-संकट के बादलों को विदीर्ण करने के लिए उस निराकार ब्रह्म ने माता देवकी के गर्भ से साकार रूप लिया।

संवत् 1997 के चैत्र शुक्ल पक्ष की द्वितीया थी। निष्कलंक चन्द्र जैसे बालक के अनुपम रूप को देखकर माता-पिता के हर्ष का पार न रहा।

ठक्कर रत्नराय अपने गाँव के माने अग्रणी व्यक्ति थे। उनके घर प्रौढ़वय में पुत्र जन्म हुआ है, सुनकर सारा गाँव आनंदमग्न हो आनंद उल्लास में डूब गया। इसी आनंदोत्सव के बीच छट्ठे दिन बालक की नामकरमविधि भी सम्पन्न हो गई। 'लाल उदयराज' सचमुच देवकी का लाल देवकीनन्दन कन्हैया ही निकला, भले ही किसी को इसका ख्याल न आया।

सारा गाँव आनंदमग्न था इसी बीच वजीर आहा अपने दल बल के साथ नसरपुर में आ पहुँचा। पूछते ही उसे ज्ञात हुआ कि क्षत्रिय जाति के रत्नराय के घर एक बालक जन्मा है। समाचार पाते ही आहा सीधे रत्नराय के यहाँ जा पहुँचा।

वजीर को ठाट-बाट में अपने द्वार पर आया देख ठक्कर रत्नराय के हर्ष की सीमा न रही। उसने वजीर का खूब आगत-स्वागत किया। वजीर के कहने पर पालने में सोते हुए नन्हें कन्हैया को आनंद से उमंगित हो लाकर दिखाया।

जैसे पूतना स्तन पर जहर लगाकर आयी ऐसे ही वजीर आहा गुलाब के फूल में जहर लाया। उस मनोहर बालक के अलौकिक रूप पर टकटकी लगाये घड़ी भर आहा देखता ही रह गया। वह देखता क्या है कि घड़ी भर पहले वाला बालक बदल रहा है, उसे लगा मानो कोई दस वर्षीय रूपवान किशोर हो। इतने में पुनः वही बालक मूछ-दाढ़ीयुक्त मध्यम वय के एक आकर्षक पुरूष सा जान पड़ा। वह विचारों के उधेड़बुन में पड़ा ही था कि वही स्वरूप बूढ़े आदमी में परिवर्तित हो, पुनः पालने पर झूलते हुए बालक के रूप में दिखाई देने लगा। इस अदभुत दृश्य को देख आहा भीतर ही भीतर चकित हो उठा। उसे यकीन हो गया कि ठक्कर रत्नराय के यहाँ आकाशवाणी के अनुसार दिव्य पुरूष ने स्वरूप ले लिया है। उसने रत्नराय से कहाः

"तुम्हारे यहाँ पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई है, इसे सुनकर शाह अत्यंत खुश हुए हैं। वे तुम्हारे बालक को देखना चाहते हैं।"

इस आदेश को सुनते ही रत्नराय काँप उठे। उन्हें शाह की अनाचारी नीतियों का पूरा पता था। वह कंस की याद ताजी कराने वाला कम्बख्त था। फिर भी उन्होंने हिम्मत धारण करते हुए कहाः "इतने छोटे बच्चे को लेकर इतनी दूर आना अभी कैसे सम्भव है ? उसे कुछ बड़ा हो लेने दो। फिर शाह की सेवा में हाजिर हो जाऊँगा।"

"अच्छा। तो ऐसा ही करो, पर एकाध महीने में शाह के सम्मुख हाजिर हो जाना, नहीं तो फिर तुम जानते ही हो.....।" यह कह कर दल-बल के साथ वजीर उलझनों में डूबता-उतराता नगर समै की तरफ चल पड़ा। नगर के समीप पहुँचते ही उसे एक आश्चर्यजनक दृश्य दिखाई दे गया। सिंधु-सागर के मध्य से निकलकर रत्नराय का बच्चा ठीक उसी तरफ बढ़ता चला आ रहा

है। वह अकेला नहीं है, उसके पीछे युद्ध के वाद्य बजाती विशाल सेना भी चली आ रही है। इस दृश्य को देख आहा भय से काँप उठा। उसके होश-हवाश उड़ गये। "क्या यह सब है ? नहीं, नहीं, भ्रम।" मन की इस द्विधा में उसका हाथ बंदगी की मुद्रा में जुड़ गया। इतने में देखता क्या है कि वह बालक लाल उदयराज उसके पास आकर खड़ा है। उसे अपने इतने समीप में आया देख आहा ने बड़ी नरमी से निवेदन कियाः "हे अवतारी ! हे औलिया महापुरूष ! मैं तो अकेले आपको पकड़कर शाह के सामने हाजिर करने को आया था। कृपा करके आप अपनी सेना को विदा कर दें।"

"तेरी यही इच्छा है तो एवमस्तु। मैं अकेले ही तेरे शाह के पास चलता हूँ।" यह कहते हुआ बालक लाल उदयराज एकाएक अदृश्य बन गया। उसके जाते ही क्षणमात्र में विशाल सेना भी कहीं अलोप हो गई।

इस अदभुत दृश्य की अनुभूति से काँपता हुआ आहा सीधे अपने घर पहुँचा, परंतु देर रात तक उसे नींद न आई, इस सोच में कि मरखशाह को क्या जवाब दे ? सारी रात इसी उधेड़बुन में छटपटाता रहा। सवेरा होते ही वह नहा-धो सीधे शाही महल में दाखिल हुआ। देखा तो, रात्रि-जागरण से मरखशाह की हालत भी खिन्न और थकित जान पड़ी। आहा को देखते ही वह खुल पड़ाः

"आहा ! तू नसरपुर भले जा आया, परंतु तुझसे पहले ही वह बालक कल रात शाही महल में आ पहुँचा था।"

शाह की बातें सुन आहा चकित हो कहने लगाः "यह तो बड़ी ही हैरतअंगेज दास्तान मानी जायगी ! फिर क्या हुआ जहाँपनाह ?"

"हुआ यह कि पहले मैंने उसे रोकने के लिए पहरेदारों को हुक्म दिया, पर वह बालक किसी भी तरह उनके हाथ न आया। वे हैरान-परेशान हो गये। बालक के भाँति-भाँति के रूप और चमत्कार को देख मैं भी चकित बन गया। मुझे लगा कि यह तो किसी पीर का भी पीर औलिया ही है। फिर तो मैं दीन स्वर में विनती करते हुए उससे बोलाः

"हे पीरों के पीर ! इस बन्दे पर रहम करो और सारे हिन्दुओं को ऐसी नसीहत कर दो कि वे लोग इस्लाम धर्म को अपना लें, जिससे मुझे उन पर जुल्म न करना पड़े।" तत्पश्चात सिर हिलाकर शांत हो उस बालक ने कहाः 'रे मरखशाह ! धर्म चाहे कोई भी हो, सभी उच्छृंखल मानवजाति को नियंत्रित करने के लिए है, परमात्मा में लगाने के लिए है। तुम्हारी नजर में चाहे उनमें फरक मालूम पड़े, पर ईश्वर कहो या खुदा कहो, उसकी दृष्टि में हिन्दू मुसलमान भिन्न - भिन्न नहीं हैं। जैसे एक ही नगर में जाने के रास्ते भिन्न-भिन्न होते है, जो चाहे जिस मार्ग से नगर दाखिल हो सकता है, ठीक उसी प्रकार ये भिन्न-भिन्न धर्म परमात्मा के नगर में ले जाने वाले भिन्न-भिन्न मार्ग हैं।'

तुम यदि कुरानशरीफ के कायल हो तो उसे ही याद करो, उसमें क्या लिखा है ? उसमें तो स्पष्ट आदेश दिया है कि "सभी पदार्थों में ईश्वर को देखो, पहचानो। उसके मुताबिक सभी मनुष्य खुदा के बंदे हैं यह मानकर सबके साथ अपने भाई जैसा व्यवहार करो। अत्याचार छोड़ हृदय में दयाभाव भरकर अपना राजधर्म सँभालो और सभी को उनके अपने-अपने धर्म के मुताबिक चलने की इजाजत दो।"

इस प्रकार उस औलिया की वाणी सुन मेरी आँखें खुल गईं। मैंने हाथ जोड़ दीन भाव से उनसे निवेदन किया - ऐ मालिक ! तुमने जैसा उपदेश दिया है, मैं अबसे वैसा ही करूँगा और अत्याचार का मार्ग त्यागकर सभी हिन्दुओं को मैं भाई जैसा मानूँगा।"

मेरी दीन वाणी को उस औलिया ने चुपचाप सुना और 'तथास्तु !' कह एकाएक विदा हो गया।" इतना कहने के बाद मरखशाह थोड़े समय तक अवाक्-सा चुप बना रहा, फिर कुछ सोचकर आहा की ओर देखते हुए हुक्म देने की अदा में बोल उठाः

"आहा ! जो हुआ सो हुआ। अब इस बात का किसी से जिक्र तक नहीं करना, नहीं तो अपनी ही बदनामी होगी। हिन्दू भले ही अपने धर्म का पालन करें, हमें किसी की राह का रोड़ा नहीं बनना है। यह मेरा हुक्म है, इतना ध्यान रखना।"

मरखशाह की बात सुनकर आहा चकित हो गया। क्षणभर तो विचारों में डूब गया। क्या कहे कुछ समझ ही न पाया। 'जैसा जहाँपनाह का हुक्म।' मात्र इतना कह शाही महल में से अपना-सा मुँह लेकर वापस लौट गया।

यह घटना घटे काफी दि बीत चले थे, शाह और वजीर को शांत देख हिन्दुओं ने आश्चर्य के साथ-साथ शांति की साँस ली। महाजन मंडलियों ने यह माना कि हमारे ऊपर छाये हुए संकटों से प्रत्यक्षदेव श्री दरियालाल ने हम सभी को उबार लिया।

इधर मरखशाह जैसे अनाचारी और धर्मान्ध राजा में परिवर्तन जगाकर लाल उदयराज नसरपुर लौट आये पुनः झूले में झूलते हुए क्रमशः बड़े होते गये। उनकी बाल सुलभ लीलाओं को देखकर दम्पति के हर्ष की सीमा न रहती। देखते ही देखते छः वर्ष का समय और निकल गया।

छः वर्ष के होते ही लाल उदयराज को पिता ने विद्वान पण्डित के पास पढ़ने को भेज दिया। थोड़े ही वर्षों में उस बालक ने विद्याभ्यास के साथ-साथ सभी शास्त्र एवं कलाओं में प्रवीणता भी प्राप्त कर ली। उसकी प्रखर तेजस्विता देख गुरू को आभास मिल गया किः "शिष्य कोई सामान्य शिष्य नहीं है, एक विलक्षण शक्ति इसमें है। आगे चलकर संसार में यह अपना नाम अवश्य उजागर करेगा।"

विद्याभ्यास सम्पन्न करके लाल उदयराज घर लोटा, तब तक वह 13 वर्ष का हो चुका था। पिता ने अपने कुल धर्म के अनुसार उसे कुहर (पका हुआ चोला) बेचने का काम सौंपा। बालक उदयराज अपने हमउम्र अन्य साथियों के साथ कुहर से भरी थाल ले सवेरे ही निकल पड़ता और रास्ते में अन्य बालकों से बिछुड़ कर सिंधु सागर तट पर जा पहुँचता। वहाँ थाल को

सिंधु-सागर की लहरों में सौंप खुद निजानंद की मस्ती में ध्यानमग्न हो जाता करता। साँझ ढलते ही दरिया में समर्पित थाल उसे धन-धान्य और सम्पत्ति से परिपूर्ण स्वरूप में पुनः वापस मिल जाया करती, उसे लेकर घर लौटा करता।

नित्य इसी तरह धन-धान्य और सम्पत्ति से परिपूर्ण थाल ले घर वापस लौटते देख पिता के मन में शंका जगी और वे एक दिन उदयराज के पीछे लगकर चुपके-चुपके सिंधु तट पर जा पहुँचे। देखते क्या हैं कि पुत्र ने थाल को सागर में बहा दिया और स्वयं तट पर ध्यान मुद्रा में लीन हो बैठ गया। सारा दिन इसी अवस्था में निकल गया। शाम ढली तो वही थाल धन-धान्य से परिपूर्ण हो जल से बाहर निकल आया, जिसे उठाकर उदयराज घर की दिशा में चल पड़ा। इस चमत्कार को देख पिता के मन में कुछ हुआ। वे चुपचाप घर लौट और इस चमत्कारिक घटना की चर्चा करते हुए पत्नी से कहने लगेः "तू माने या न माने, यह लड़का पूरण परमात्मा है।" इस वाक्य को सुनते ही देवकी विचारों में खो गई। उसे भगवान श्रीकृष्ण की लीला का ध्यान हो आया। उन्हीं लीलाओं की झाँकी उदयराज की लीला में पाकर वह मन ही मन भावविभोर हो गई। उसे भाव-समाधि हो गई।

उस दिन से कुहर बेचने का काम रोक दिया गया। फिर भी लाल उदयराज नियमित रूप से नित्य सागर तट पर जाया करते और स्नान तथा ध्यानोपासना करके वापस लौटते। कृष्णलीला जैसी अनेक लीलाओं के रंग मित्रों को बताया करते। इस तरह सिंधु - सागर तट पर जाते समय उन्हें अमरयोगी गुरू गोरखनाथ से भेंट हो गई। अवधूत शिरोमणि योगेन्द्र को देखते ही उदयराज ने उनसे नम्र निवेदन कियाः "नाथ जी ! मुझे गुरूमंत्र देकर अपना शिष्य बनाने की परम कृपा कीजिए।"

यह सुनकर गोरखनाथ खिलखिलाकर हँस पड़े। जैसे सांदीपनि, दुर्वासा और गर्गाचार्य ने श्रीकृष्ण को पहचान लिया, ठीक वैसे ही अवतारी पुरूष को वे सहज ही पहचान गये और विनम्र भाव से कहने लगेः "आप तो स्वयं परब्रह्म स्वरूप हैं, सर्वव्यापी देवाधिदेव हैं। भला, आपको मैं क्या दीक्षा दे सकता हूँ ?"

"फिर भी गुरू के बिना सब व्यर्थ है। श्रीरामचन्द्रजी तक ने महाराज वशिष्ठ को अपना गुरू बनाया था।"

बात तो सच है, दुनियाई दृष्टि से यह इष्ट भी है। लोगों को उपदेश देने के उच्चाशय से आप दीक्षित होना चाहते हैं, तो ठीक है, मैं आपको गुरूमंत्र अवश्य दूँगा। परंतु हमारे बीच गुरू - शिष्य का अंतर नहीं रहना चाहिए।" यह लाल उदयराज को मंत्र देते हुए गुरू गोरखनाथ ने यह उच्चारित कियाः "मैं गोरखनाथ जैसे अमर योगीनाथ कहलाता हूँ, ठीक वैसे ही तुम संसार में अमरलाल नाम प्रख्यात बनोगे और कितने ही लोग तुम्हें जिन्दपीर के नाम से पूजते रहेंगे।"... और वहाँ से विदा हो गये।

गुरूमंत्र से दीक्षित हो आजीवन अविवाहित रह अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए मानव-धर्म का उपदेश देते रहने का निश्चय कर उदयराज घर वापस लौटे। उन्होंने सबसे पहले अपने अनुजों सोमा और भेदा को मोह-माया त्याग दरिया लाल का सेवक बनने का उपदेश दिया, परंतु भाइयों ने उनका उपदेश स्वीकार न किया। अब उदयराज ने चारों ओर जा-जाकर लोगों को उपदेश देना प्रारंभ कर दिया। उनके उपदेश का सार होता कि तुम सभी सगुण-निर्गुण की उपासना करो। इस तरह वर्षों के उपदेश के बाद उदयराज ने दरियालाल के नये भक्ति-पंथ का श्रीगणेश किया। उनकी दृष्टि में हिन्दू-मुसलमान समान थे। उदयराज की ओजस्वी वाणी सुन और उनके तेजस्वी स्वरूप को देख अनेक लोग उनके अनुयायी बने, शिष्य बने। उनमें हिन्दू थे, मुसलमान भी थे। उनका एक शिष्य पुंगर जाति का ठक्कर था और भक्ति में अति प्रवीण था। पुंगर की भक्ति से खिंचकर उदयराज उसे एक दिन सिंधु-सागर-तट ले गये। सामने अगाध जल लहरा रहा था। पुंगर की ओर देख लाल उदयराज ने आदेश देते हुए कहना प्रारंभ कियाः "पुंगर ! तू मेरे पीछे-पीछे चला आ। देख, जरा भी घबड़ाना नहीं। तू कल्पना भी नहीं कर सकता ऐसे जल में तुझे स्थल का अलौकिक दर्शन कराना चाहता हूँ।"

इतना कह लाल उदयराज पुंगर को साथ ले शेषनाग की तरह अतल सागर-जल में प्रविष्ट हो गये और थोड़ी ही देर में दोनों सागर की तलेटी में जा पहुँचे। मधुर स्वप्न में जैसे विचरण कर रहा हो इस तरह पुंगर सागर तल की अदभुत रचना को निहारते हुए एकाएक एक मंदिर के सम्मुख पहुँच गया। वह मंदिर साक्षात् लक्ष्मीनारायण का निवास जान पड़ा। मंदिर में एक रत्नजड़ित सिंहासन था। उस पर एक दिव्य ज्योति चमचमा रही थी। उस ज्योति को निरखने का प्रयास ज्यों ही पुंगर ने किया कि उसके नेत्र मुँद गये। वह हक्का बक्का हो कर रह गया।

भक्त पुंगर की यह अवस्था देख उदयराज ने अपने कोमल कर कमल को उसकी पुतलियों पर फिरा दिया। क्षण भर में ही पुंगर को मानो दिव्य दृष्टि प्राप्त हो गई हो इस प्रकार वह इस दृश्य को मायावी समझ बोल उठाः

"हे उदयराज ! हे देवाधिदेव ! मैंने आज आपकी सृष्टि और आपकी शक्ति का सचमुच दर्शन पा लिया। आपके सगुण-निर्गुण भक्तिमार्ग का सच्चा मर्म मुझे आज समझ में आया। मैं आपका उपदेश सिर आँखों पर धारण करता हूँ। आज से आपके बताये गये सगुण-निर्गुण भक्ति-पथ पर मैं विचरण करूँगा। सारे भेद-भावों को भुला मानव-मात्र के कल्याण में सदा प्रवृत्त रहूँगा।"

इन वचनों को सुनकर उदयराज संतुष्ट हो कहने लगेः "अब मुझमें और तुझमें कोई अन्तर नहीं रहा। तू मेरे मैं है, मैं तेरे मैं हूँ" और तुरंत मंदिर से बाहर निकल अपने स्वरूप का विस्तार किया। पुंगर ने देखा तो सामने एक अदभुत अलौकिक देवनगरी प्रस्तुत थी। उसके रूप और ऐश्वर्य का तो कहना ही क्या ? उसे देखते ही पुंगर आश्चर्यचकित हो उठा। लाल उदयराज उससे मार्मिक वाणी में कहने लगेः

"पुंगर ! तुम कुछ आश्चर्य में न पड़ना। माया में कुछ भी असंभव नहीं है।" और पुंगर का हाथ खींच उसे समीप के ही एक भव्य वरूणालय में ले गये। उस महालय में एक ज्योति-मंदिर भी था और वहीं सिंहासन पर एक-से-एक बढ़कर प्रभावशाली सात वस्तुएँ भी सजाकर धरी थी।

त्रिमौलीझारी (कुम्हार पात्र), अग्निज्योति, कंथा (रेशम या ऊन से बना या बुना वस्त्र), वेढ़ (अंगूठी या छल्ला), ढकला (डफली या नगाड़ा), तेग और देग (बड़ा धातु पात्र, हंडा) ये सात वस्तुएँ पुंगर को देकर लाल उदयराज ने इनकी महिमा पर प्रकाश डाला।

त्रिमौलीझारी का माहात्म्य समझाते हुए कहाः "इसमें जो जल भरा है, वह सब जीवों के लिए सुखकर और अमृतवत् है। इच्छानुसार चरणामृत के रूप में इसका उपयोग श्रेयस्कर रहेगा, फिर भी इसमें जल तो सदा पूर्ण रहेगा ही।"

अग्निज्योति का माहात्म्य-गायन करते हुए उन्होंने कहाः "यदि कोई प्रकट ज्योति है तो वह अग्नि शिखा ही है। यह अग्नि सचराचर और सर्वव्याप्त है। इसकी गिनती पाँच महाभूतों में की जाती है, फिर भी यह सचेतन है। इसकी चेतना के संयोग से सभी सचेत बनकर व्यवहार करने लगते हैं। यह चेतन सचराचर जीवों में भी व्यापक प्रभाव आभासित करता है। चेतन के बिना सब कुछ माया है। माया अर्थात् अविद्या।

जो साकार स्वरूप की सेवा करता है, वह पंच महाभूतों के समुदाय का सेवक है। पाँच महाभूतों में अग्नि और जल दो उत्तम महाभूत हैं। अर्थात् अग्नि और जल प्रकट परोक्ष दोनों स्वरूपों में फलदायक होने से पूजनीय हैं। अतः प्रथम अग्नि-ज्योति को, फिर जल को देवतुल्य समझ सेवा-उपासना करो। सच्चे मन से इन दोनों की पूजा करने वाला काल के फंदे में कभी भी फँस नहीं सकता।"

इसी तरह कथा के सम्बन्ध में देवाधिदेव ने बतायाः "इस कथा को धारण करके तुम संकट स त्राण पा सकते हो और आरोग्य की रक्षा कर सकते हो। इस वेढ़ को उंगली में धारण करना। यह जब तक उँगली में रहेगी तब तक तुम्हारा वचन निष्फल नहीं जायगा। कल्पवृक्ष की तरह यह मनोकामना-पूरक बनकर रहेगा।"

तत्पश्चात ढकला रूपी वाद्य के महत्त्व की बात बताते हुए उन्होंने कहाः "इसमें असंख्य नाद उत्पन्न होते हैं, जिसके सुनने से जन-मन का पाप-ताप दूर होगा। इस नाद का आदि नाद ॐकार है और उसी में से चारों वेदों का उदय हुआ है। यह नाद मूलतः सात स्वरों का है। इन स्वरों से छः राग और तीस रागिनियाँ, इस प्रकार कुछ छत्तीस राग होते हैं। इस राग का कारण भी राग है और विराग का कारण भी राग अर्थात् मोह है। इसे सामान्य नहीं समझना। दिन या रात किसी भी समय इस पर थाप दोगे तो उसमें से उस समय के अनुकूल स्वर का निनाद होगा। इस नाद को उत्पन्न करने वाले जो भी वाद्य सुलभ है उनमें सर्वोत्तम और परिपूर्ण वाद्य यह ढकला ही है। इसके योग से भक्तियुक्त भावना का विकास होगा।"

तेग अर्थात् तलवार और वेग का महत्त्व स्पष्ट करते हुए उन्होंने आगे बतायाः

"अक्षयपात्र या कामधेनु की तरह यह देग भी तुम्हारी मनोकामना पूर्ण करेगा। इसके द्वारा चार प्रकार के भोजनः भक्ष्य, भोज्य, लेह्य और चोष्य की प्राप्ति होगी। व्यंजनों में नीखरी, सुखड़ी और फलाहार तीनों इसमें से सुलभ होंगे। इस प्रकार इस दस देग में सातों प्रकार निहित होने से यह सभी के सार स्वरूप और अन्नदान के कारणस्वरूप है। इसमें अष्टसिद्धि और नवनिधि भी प्राप्य है। खाओ, पियो और औरों को खिलाते रहो और यह तेग अर्थात् खडग भी एक अदभुत उपकरण है। इससे बाह्य और आंतरिक विघ्नों का संहार किया जा सकेगा और सर्वत्र यह इष्ट मित्र बनकर रहेगा।"

इन सभी उपकरणों के तत्त्व और मर्म को खोलते हुए उस अवतारी सत्पुरूष ने कहाः

"सर्व सिद्धियों का कारण भाव है। जैसे लकड़ी, धातु या पत्थर की प्रतिमा की पूजा करने से जो फल की प्राप्ति होती है, वह तो मात्र भाव का परिणाम है। अतः भाव का त्याग कभी न करना, क्योंकि भाव इस विश्व का एक महान् परम पवित्र किन्तु सूक्ष्मादिसूक्ष्म द्रव्य है।"

यह सुनकर पुंगर का अन्तर उद्वेलित हो उठा। गदगद हृदय से उसने सातों वस्तुओं को ग्रहण किया। तत्पश्चात जैसे पानी में से बुलबुले फूटते हैं, ठीक वैसे ही क्षण मात्र में सागर के अतल जल में से वे सिंधु सागर तट प्रांत पर आ उपस्थित हुए।

एकाएक पुंगर का मन शंकाशील बन गया। उसने उदयराज से प्रश्न कियाः "हम लोगों के अतल जल में जाकर लौट आने में कितना समय लगा होगा ?" यह सुन उदयराज पहले तो हँसे, फिर सहज भाव से कह उठेः

"अभी तो एक ही घड़ी हुई होगी।"

यह जान पुंगर के आश्चर्य की सीमा न रही। वह कहने लगाः "नाथ ! आप की लीला अकल्पनीय है। इसका पार कौन पा सकता है ?"

"लेकिन यह सब मन में ही रहना।" कहते हुए उदयराज वहाँ से चल पड़े और चलते-चलते दोनों अपने-अपने घर लौटे।

घर लौटकर लाल उदयराज न अपने माता-पिता एवं कुटुम्बीजनों को एकत्र करके अपने प्रयाण की इच्छा प्रकट करते हुए कहाः "मैंने जिस लक्ष्य के लिए मानव अवतार लिया है, उसमें पहला लक्ष्य तो यवनों के दर्प का मर्दन करना था, यह कभी का सिद्ध हो गया है। दूसरा लक्ष्य अनल और सलिल इन दो प्रत्यक्ष देवों की उपासना का मर्म सबको समझाकर जन-जन के दुःख दूर करना है। इस प्रकार नूतन मत का मार्ग सब को सिखला कर नये मानव-धर्म का उदय करना है। उसके लिए सम्पूर्ण वैराग्य की जरूरत होने से मैं आज यह घर त्यागकर जाना चाहता हूँ।"

लाल उदयराज के गृहत्याग की बात सुनकर घर के सभी लोग द्रवित हो उठे। माता-पिता के शोक का तो पार ही न रहा। सब को शोकाकुल देख उदयराज ने फिर कहाः "माता, पिता, पुत्र जगत में कोई किसी का नहीं है। सब प्रारब्ध के योग से एक-दूसरे से आकर मिल जाते हैं। रात

पड़ते ही जैसे पक्षी अपने घोंसले में लौट एकत्र होते हैं और प्रभात होते ही उड़ जाते हैं, ठीक वैसे ही सब को इस जगत से एक दिन विदा होना है। अतः इस प्रसंग पर किसी को शोक नहीं करना चाहिए। मैं अन्यत्र कहीं जाने वाला नहीं, निरंतर यही निवास करने वाला हूँ। तुम सब मेरे दर्शन और श्रवण के लिए आ सकते हो ?" यह कहकर उदयराज सबको शोक-विह्वल दशा में छोड़ पुंगर को साथ ले चल निकले।

गृहत्यागी स्वरूप में उदयराज जगह-जगह फिरने लगे। ग्राम्य जनों ने अपने नवीन मत का धर्ममय उपदेश देने वे जहाँ जाते पीछे-पीछे भक्तों का अपार जन समूह उमड़ पड़ता। दरिया लाल की जय.... का निनाद गूँज उठता। उनके भक्तों में हिन्दू थे, मुसलमान भी थे। प्रत्यक्ष देव, अग्निदेव और जलदेव की महिमा सभी के हृदय में प्रतिष्ठित हो जाती थी।

यों ही कितने वर्षों तक यहाँ से वहाँ विचरण करते हुए अपने नवीन धर्ममत का उपदेश देने के बाद वे नसरपुर आये और वहीं स्थिर होने के आशय से पुंगर तथा सभी भक्तों को दरियास्थान बाँधने का आदेश दिया। उनके आदेश के अनुसार पुंगर और भक्तजनों ने मिलकर नसरपुर में भक्तजनों ने मिलकर नसरपुर में भव्य दरियास्थान का निर्माण किया।

मंदिर तैयार हुआ, उसी शुभ दिन पर उदयराज ने पुंगर को दी हुई सातों वस्तुएँ मँगवाकर भक्तों के सम्मुख वहाँ स्थापित किया। सर्वप्रथम सिंहास पर अखंड ज्योति की प्रतिष्ठा की गई, उसके पास झारी रख दी, सिंहासन के सामने एक तरफ ढकला को व्यवस्थित रखा गया और देग को एक कोने में स्थिर कर दिया गया। पुंगर को कंथा और वेढ़ पहनाकर ज्योति के पूजक के रूप में नियुक्त किया गया। इस प्रकार एकत्र मेदिनी को लाल उदयराज ने प्रकट देव ज्योति और जल की महिमा समझा समझाकर उपदेश दिया।

नित्य प्रातः और सायंकाल में अदभु निनाद के साथ ज्योति की विधिवत् पूजा होने लगी। देग में भोजनादि प्रसाद बनता और सभी जाति के लोगों को वितरित किया जाता। भिक्षुकों के दल के दल प्रसाद लेने को जुट आते। उदयराज वहाँ बैठकर लोकोपदेश करते हुए अपने मत को विभिन्न विधियों से समझाते जिससे प्रभावित हो अनेक उनके शिष्य बनते। इस प्रकार दिनोदिन उदयराज के नवीनतम मत का चारों ओर प्रचार प्रसार बढ़ता गया।

वर्षों तक उपदेश देने के बाद एक दिन अपने ग्राम में लौटे और स्वकुलीन एवं ठक्कर जातीय जनों को एकत्रित करके उन्हें उपदेश देते हुए कहाः

"हे शुभनामधेय क्षत्रियों ! सुनो। सभी देव ज्योतिर्मय और जलमय हैं, अतः जल और ज्योति की नयी उपासना-रीति का उपदेश सभी को देकर मैंने अपना कार्य पूरा कर लिया है। इसीलिए इस दरियास्थान की स्थापना की गई है। हे प्रियजनों! इस मत को तुम नूतन नहीं, पुरातन धर्म का एक स्वरूप या मार्ग मानना। क्योंकि अग्नि की तरह जल के भी अनेक पूजक हैं, तथापि उसके पूर्व ऐसा कोई मत प्रकट नहीं किया जा सका है। इसीलिए इस परिवर्तनशील युग में इस नवीन मत की स्थापना की गई है। यह मत सबके लिए श्रेयस्कर है। अतः तुम सब

इस मत को स्वीकार करके, जहाँ-जहाँ क्षत्रिय कुल के लोगों का निवास हो, उन सभी ग्राम-नगरों में दरियास्थान बाँध-बँधवाकर उसमें विधिवत ज्योति की प्रतिष्ठा करना। तुम सबको यह मार्ग बताने के लिए ही मैंने इस नवीन दरिया स्थान को बँधवाया है और इसके पुजारी के रूप में भक्त पुंग को नियत किया है। इनके वंशज भविष्य में भी पुजारी के रूप में स्वीकारे जाएँ। उनके प्रति गुरूभाव धारण करते हुए तुम अपने-अपने धर्म का दृढ़ता ले पालन करते रहना। सबके कल्याण के लिए कल्याणकारक साधना के रूप में दरियास्थानों का निर्माण करा-कराकर, सभी लोग मिल-जुलकर कथा-कीर्तन रूपी अमृत रस का पान करते रहना।"

अपने बंधु-बाँधवों को अंतिम उपदेश से प्रबोधित कर उदयराज अपने चिर प्रयाण वेशभूषा में अश्वारूढ़ हो किसी अज्ञात स्थल की ओर चल निकले।

चलते-चलते वे जहेजा नामक स्थान पर पहुँचे। यह स्थान एक जाट का था। राजाओं के भी अधिराज तुल्य अश्वारूढ़ उदयराज ने जाट से उसके स्थान की माँग की। जाट ने विनम्रता से उनकी माँग को स्वीकार कर वह जगह उन्हें समर्पित कर दी। जहाँ पर जाट खड़ा उस स्थान को उदयराज ने खोदने का सुझाव दिया। जमीन खोदी गई तो नीचे से अपार धन सम्पत्ति प्राप्त हुई। जाट के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वह कौतूहलवश दौड़े-दौड़े घर पहुँचा और अपनी पत्नी से सब कुछ कह सुनाया। पत्नी ताड़ गई कि हो-न-हो निश्चय ही यह कोई चमत्कारी पुरूष है। फिर दम्पति ने उदयराज के पैर पकड़ विनयपूर्वक निवेदन कियाः "हे दीनदयाल ! हमें यह सब माया नहीं चाहिए। हमको तो आपकी सेवा चाहिए। हम तो केवल पुजारी बनकर आपकी सेवा चाकरी में जीवन गुजार देना चाहते हैं।"

"तथास्तु। तुम्हारे इस स्थान का महत्त्व अब बढ़ेगा और माया तुम्हारी दासी बनकर रहेगी।" इतना कह अपने हाथ के त्रिशूल को वहीं जमीन में गाड़ दिया। जहाँ त्रिशूल चुभा था वहाँ तुरन्त एक बड़ा-सा पातालमार्ग खुल गया। देखते ही देखते मानो कोई घटना ही न घटी हो इस तरह शांत रूप में तत्क्षण उदयराज उसी मार्ग पर बढ़ते हुए पाताल में विलीन हो गये।

इस चमत्कारिक घटना की सूचना पाते ही भक्त पुंगर अपने अनेक शिष्यों सहित वहाँ आ पहुँचा और जिस स्थान में उदयराज भूगर्भ में प्रविष्ट हो अमर बने थे, वहीं उनकी भव्य समाधि की तैयारियों में जुट गया। उधर शाह मरखशाह को ग्योंहि यह खबर मिली उसने वजीर आहा को जहेजा भेजकर उसी स्थल पर पीरों के पीर लाल उदयराज के नाम पर एक आलीशान ताबूत (काबा) बनाने की इजाजत दी। इस बीच भक्त पुंगर और आहा में उस स्थान के लिए विवाद उठ खड़ा हुआ। इतने में आकाशवाणी जैसी प्रतिध्वनि सुनाई पड़ीः

"मेरे लिए आपस में कोई लड़ाई मत करना। मेरी दृष्टि में हिन्दू-मुस्लिम सभी समान हैं।" अन्त में दोनों में समाधान हो गया। राजाज्ञा के अनुसार वहाँ ताबूत (काबा) बाँधे जाने और पुंगर द्वारा उसमें अखण्ड ज्योति की स्थापना करने कि निश्चय हुआ। इस प्रकार ताबूत (काबा) बनकर तैयार हुआ। असंख्य हिन्दू-मुस्लिम की स्थापना की गई और दरियालाल की जय.... के नारों से

जहेजा प्रतिध्वनित हो उठा। लाल उदयराज अपना अवतार-कार्य सम्पन्न करके उसी दिन से अमरलाल बन गये।

इस प्रकार जहेजा में अखण्ड ज्योति की स्थापना करके उस ज्योति की पूजा के लिए अपनी तरफ से भक्त पुंगर ने एक पुजारी को नियत किया और काबा की सेवा के लिए राज्य की ओर से जाट दम्पति को मुजावर के रूप में नियुक्त किया गया। तभी से चैत्र सूद द्वितीया को दरियाला के जन्मदिन पर वहाँ मेला लगने लगा, जिसमें हजारों की भीड़ जुटती और प्रसाद के रूप में सबको मीठा-मीठा चावल बाँटा जाता। इस प्रकार जहेजा का इतना महत्त्व बढ़ता गया कि वह भारत का पंचमतीर्थ बन गया।

किंवदन्ती है कि इसके थोड़े ही वर्ष पश्चात् अमरलाल सखर-बखर में प्रकट हुए थे। वहाँ सिन्धु के मध्य में जिन्दपीर के नाम स ताबूत (काबा) बाँधा गया है जो तरबारा के नाम से भी जाना जाता है। इस बीच भक्त पुंगर ने उदयराज के नवीन मत का अत्यधिक प्रचार किया और जगह-जगह दरियास्थानों का निर्माण कराया। तत्पश्चात् अपनी गद्दी पर माता तुल्य अपनी पत्नी अमाबाई को बिठा इस दुनिया से विदा ली। इस अमाबाई को सिंध में गार्गी और प्रतिगार्गी के रूप में जाना जाता है। पच्चीसवें अवतार कहे जाने वाले दरियालाल की जन्म-जयन्ती चैत्र-सुद दूज के दिन सभी दरियास्थानों और दरियालयों पर मनाई जाती है। सिंधी बन्धु उन्हें झुलेलाल के रूप में पूजते हैं और मुसलमान उन्हें जिन्दपीर के रूप में अपनी भव्य बन्दगी अदा करते हैं।

सचमुच दरियालाल के स्वरूप में अपने अवतार का कार्य पूरा करके लाल उदयराज अमरलाल बन गये हैं। उनके जीते-जागते चमत्कारों का अंत आज भी कोई नहीं पा सका।

झूले झूले झूले झूलुलाल...
आयो लाल झुलेलाल.
लाल उदेरो रत्नाणी
करी भलायूं भाल....
आयो लाल झुलेलाल.
असीं निमाणा ऐब न आणा
दूला तूहेंजे दर तें वेकाणा
करीं भलायूं भाल...
आयो लाल झुलेलाल.
झूले झूले झूले झुलेलाल....

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

जीवन-उद्धारक विभूति

जीवन के मनोवांछि क्षेत्र में सफलता पाने के लिए तीव्र बुद्धि, विकसित प्राणबल और शुद्ध भावबल की आवश्यकता है। अपने भीतर सुषुप्त जीवनशक्ति जग जाय तो अपनी इच्छा शक्ति और ज्ञानशक्ति के सन्तुलन साधते ही अपने में जीवन-साफल्य साधक विविध कलाएँ खिल उठती हैं।

प्रत्येक कार्य की सफलता के लिये

1 जीवनशक्ति किस प्रकार जगाई जाये ?

2 अभ्यास तथा अन्य कार्य तीव्र एकाग्रता किस प्रकार सिद्ध किया जाय ?

3 याद-शक्ति किस प्रकार बढ़ाया जाय ?

4 तन को स्वस्थ, मन को प्रसन्न और बुद्धि को कुशाग्र कैसे बनाया जाय ?

5 हताश, निराशा, भय, चिंता और मानसिक अशांति को कैसे दूर किया जाय ?

6 जीवन को उमंग-उत्साह से पूर्ण और मधुर कैसे बनाया जाय ?

7 किसी भी क्षेत्र में सफलता के लिए आवश्यक साहस, हिम्मत और शौर्य कैसे जगाया जाय ?

इस सभी प्रश्नों के सटीक हल योग और वेदान्त की शक्तिपात-वर्षा द्वारा अमृत-सिंचन करके अनेक युवकों के जीवन-पुष्पों को खिलाने वाले, जीवन-ध्येय की सफलता की सीढ़ियों पर चढ़ाने वाले, प्यार-दुलार के महावृक्ष तुल्य पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू के संक्रमणशील स्नेहसिक्त सान्निध्य में मिल जाता है।

एक अनोखे योगी

उनके दर्शन और नयनामृत से संसिक्त एक सज्जन ने लिखा हैः

"कोई मुझसे पूछे कि 'अहमदाबाद के समीप में सच्चे योगी कौन हैं, तो मैं तुरंत ही श्री आसाराम जी बापू का नाम लूँगा। मोटेरा गाँव में साबरमति तट पर स्थित स्वनामी भव्य आश्रम में विराजमान इन दिव्यात्मा का दर्शन पा लेना जीवन धारण करने का एक महत्तम साफल्य है। उनके निकट में आना यह तो धन्यता की परिसीमा है।

योगियों की खोज में मैं भटका हूँ। पहाड़ों और खाइयों को रौंदने में कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा है। परंतु प्रभावशाली व्यक्तित्वों में वरेण्य ऐसे स्वामी श्री आसारामजी बापू के मिलते ही मुझे अंतरात्मा से ही यह प्रतीति हो गई कि यहाँ खरे कुंदन का ही टीला है।

प्रेम और प्रज्ञा के सिंधु

आँखों के जगमगाते अलौकिक तेज और अन्तर की असीम दिव्यता में अपने को लापता कर देने की आकांक्षा रखने वाले को पल मात्र का भी समय गँवाना नहीं पड़ेगा। ऐसा लगता है मानो प्रेम और प्रकाश के असीम सागर की गर्जना करती हुई परम्पराएँ....।

सरल भी उतने ही। छोटे बालक जैसा व्यवहार करें। ज्ञान भी वैसा ही विचक्षण कि विकट से विकट पलभर में ही सुलझा दें। वाणी की अनुगूँज ऐसी की जागरण के तट पर निद्राधीन व्यक्ति को पलभर में जगाकर ज्ञानसागर की मस्ती में डुबो दें।

अनगिनत शक्तियों के सम्राट

अन्यत्र दुर्लभ ऐसी योग-सिद्धियाँ अनेक बार इनमें देखी गई हैं। अनेक दरिद्रयोंको सुख के समृद्धि-सागर में तैरा दिया है। इनके चुम्बकीय शक्तियुक्त पावन सान्निध्य में अनेको ने जिन चमत्कारों और दिव्य अनुभवों की अनुभूति पा ली है, यदि उनका निरूपण करना चाहूँ तो एक विराट भागवत कथा तैयार हो जाय। आगत व्यक्ति के मन को जान पहचान लेने की शक्ति उनमें इतनी तीव्रता से सक्रिय रहती है, मानो वे सम्पूर्ण आकाश को हथेली में देख रहे हों।

ऐसे परम सिद्ध महापुरूष के सान्निध्य में उनकी पावन-प्रेरक अमृतवाणी में से तुम्हारी जीवन-समस्याओं का सुन्दर समाधान अवश्य मिल जायेगा

चैतन्यधाम संत श्री आसाराम जी आश्रम

साबरतटीय इस आश्रम में प्रविष्ट होने के साथ ही अदभुत शान्ति का अनुभव होता है। प्रत्येक रविवार, बुधवार तथा ध्यानयोग के शिविरों में ज्ञान का अजस्र प्रवाह बहता रहता है। आध्यात्मिक अनुभूतियों के उपवन लहलहाते हैं। आश्रम का समग्र वातावरण चैतन्य-विद्युत से उद्दीप्त-सा प्रतीत होता है। ऐसा लगता है मानो परम चैतन्य स्वयं स्वरूप धारण करके प्रेम और प्रकाश के सिंधुओं में तूफान जगाता है। विद्यार्थियों के लिए आयोजित शिविरों में अनेक विद्यार्थियों एवं अध्यापकों ने अपने जीवन-उत्कर्ष का अनोखा पथ पा लिया है।

पूज्य बापू का विद्युन्मय व्यक्तित्व, अन्तर की गहराई से प्रस्फुरित वाग्धारा और आश्रम के समग्र वातावरण से समुत्पन्न दिव्यता को जिन्होंने एक बार छू लिया है वे कभी भी भूल नहीं सकते। जो लोग अपने हृदयांगण में अमृत पा लेने को सजाग होते हैं उन्हें अमृत का स्वाद मिल जाता है।

प्रियजनों ! समय बहुमूल्य है। बीता हुआ समय कभी हाथ नहीं आता, इसलिए देखना, चूक न जाना ! जीवन को नवोत्कर्ष के पथ पर सोत्साह अग्रसरित करने वाले ऐसे दुर्लभ संतों का सामीप्य सदा नही मिला करता। मौके को मत चूकिये !.... प्रमाद में रहकर क्या जीवन क अछूता ही रखना चाहते हो ? गड्डरिया प्रवाह में निमग्न होकर अन्य लोगों की तरह जीवन की गाड़ी को अनेक दिक्कतों से परिपूर्ण पुरानी पटरियों पर ही आज भी खींचते रहना चाहते हो ?

ना..... ना..... ऐसा न करना मेरे भाई। दुःखमय जीवन का आमूलचूल परिवर्तन करने के लिए... जीवन को मधुमय बनाने के लिए कमर कस लो। योगविद्या और ब्रह्मविद्या में से जीवन-पोषक और मार्गदर्शक सूत्र जानने, समझने और उससे लाभान्वित होने के लिए ऐसे अनन्य लोकसंत के सान्निध्य का अवश्य लाभ हो। ब्रह्मनिष्ठ, योगसिद्ध, माधुर्य के महासागर तुल्य संत

श्री आसारामजी बापू का सान्निध्य सेवन करने वाले का, अमृतवर्षा का रसास्वाद लेने का अणुमात्र पुरूषार्थ भी व्यर्थ नहीं जाएगा ऐसा अनेक पारखियों का अनुभव होता है।"

तंत्री 'गागर में सागर'

अनुक्रम

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू का दिव्य संदेश

हे आत्मदेव..... अब तो अनावृत होइये....

मरखशाह द्वारा मुसीबतें आयी और लोग समुद्रतट पर गये। अपनी सुषुप्त शक्तियों को जागृत किया। उनके संकल्पबल ने व्यापक चैतन्य को रत्नराय के घर झुलेलाल के रूप में प्रकट करवाया।

.....तो हे साधक ! तुम्हारे भीतर छुपा हुआ वही चैतन्य, लालों का लाल वह आत्मदेव तुम्हारी साधना और दृढ़ता से क्या अनावृत नहीं हो सकता ?

पिछले युग का यश उस युग के यशस्वियों को मुबारक हो, क्योंकि उनमें भी तुम्हीं वर्त्तमान थे। यदि अपने स्वरूप में जाग जाओ तो तुम अपने को सम्पूर्ण यश और प्रकृति के.... अनन्त अनन्त ब्रह्माण्डों के स्वामी के रूप में पहचान लोगे। तुच्छ अहं के विलय, तरंग के विलय होते ही आत्मस्वरूप में जाग जाओगे।

त्याग दो इस तुच्छ देहाध्यास को। आत्मानुभव की यात्रा करो। कब तक इस जगज्जाल में, इस स्वप्नवत् संसार में गोते लगाते रहोगे ?

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम